बौने राजतंत्र में महानायक की प्रतीक्षा

नया नहीं है। 'सिंहासन का न्याय' में उनके ५७ आलेख दो शीर्षकों 'लोकतंत्र- सोपान और समस्याएँ' तथा 'सत्ता के शिखर : दलदली घाटियाँ' के अंतर्गत संकलित हैं। पहले भाग के आलेखों में हमारी लोकतंत्रीय व्यवस्था से जुड़े प्रसंग, मुद्दे बने हैं और दूसरे भाग में शीर्षस्थ लोगों की छवियों, व्यवहारों और मनोवृत्तियों पर टिप्पणियाँ हैं।

सम-सामयिक प्रसंगों पर १९९८ से २००० के बीच लिखी गई ये टिप्पणियाँ आज भी महत्वपूर्ण हैं। उनमें अंतर्निहित वैचारिक संदेश आज भी हमें प्रभावित करते हैं। ऐसा इसलिए भी है कि जमीन से जुड़े इस लेखक ने आम आदमी के दुख-दर्दों से अपने को बावास्ता किया हुआ है। लेखक साधारण और सामान्य के महत्व को रेखांकित करते हुए, सार्वजनिक व्यवहारों एवं राष्ट्रीय प्रश्नों में हर स्तर पर मानवीय हस्तक्षेप की पुरजोर वकालत करता है। उठाए गए मुद्दों में स्थितियाँ प्रामाणिक, ही है कि भले ही हम एक नई व्यवस्था न बना पाएँ, परंतु मानवीय विकल्प तो खुले रख ही सकते हैं। एक पुस्तक इतना भर कर पाए वही बहुत है। चुनाव आयुक्तों के सार्वजनिक व्यवहारों की मर्यादाओं, रक्षा संबंधी आवश्यक गोपनीयता के बहाने अनावश्यक गोपनीयता की निरर्थकता जैसे मुद्दों पर लेखक हमारा ध्यान आकर्षित करता हुआ मौजूदा दृश्य पटल में साम्प्रदायिकता के धार्मिक कवचों के उपयोग किए जाने पर स्पष्टता के साथ विचार रखता है और एक प्रश्न उछालकर पानी में पत्थर फेंकता है : 'कायाकल्प की क्षमता रखने वाले भारत में, वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था का कायाकल्प क्या अब अनिवार्य नहीं लग रहा है?' और पाठक की जिज्ञासा बनती है कि राजनीतिक दलों के पास इसका है कोई जवाब? 'अनुभव के यक्ष प्रश्न' में अनुभवहीनता के बहाने प्रचारित परिवारवाद और अखाड़ेबाज राजनीतिज्ञों पर भरोसा करने की कूटचालों का छद्म उजागर किया गया है। 'महानायक की प्रतीक्षा' में विश्वास पाटिल के उपन्यास 'महानायक' की चर्चा से प्रारंभ कर आज महानायक जैसे किसी विराट व्यक्तित्व की अनुपस्थिति रेखांकित करते हुए, राजनीतिक परिदृश्यों के बौनेपन को प्रकट किया गया है। 'अरुन्धती से असहमति' से पाठक असहमत तो हो सकता है, पर वह लेखक की बिना भावुक हुए मार्मिक प्रहार करने की क्षमता का कायल भी हो जाता है। 'साँड की मानसिकता' आलेख में लेखक राजनीतिक तंत्र से जुड़े लोगों के बदलाव की आवश्यकता अनुभव करता है। इन आलेखों में चिंताएँ केवल चुस्त जुमलेबाजी नहीं हैं, अपितु सच्चाइयों के परिवेश को छूने का प्रयत्न करती हुई एक कुलबुलाती-सी व्यग्र नज्म का रूप लेती हुई दिखाई देती है।

पुस्तक :	सिंहासन का न्याय
लेखक :	आलोक मेहता
प्रकाशक :	सामयिक प्रकाशन, जटवाड़ा, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली-२
मूल्य :	२५०/-

● महेश दुबे